इकाई 18 विश्रुतचरितम् (11–15 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

- 18.2.1 अनन्तवर्मा को विहारभद्र का उपदेश
- 18.2.2 विहारभद्र द्वारा नीतिशास्त्रकारों की निंदा
- 18.2.3 विहारभद्र का अनन्तवर्मा को स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव
- 18.2.4 अनन्तवर्मा द्वारा मंत्री वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा
- 18.2.5 वसुरक्षित द्वारा तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय

18.3 सारांश

18.4 शब्दावली

18.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

18.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप–

- विश्रुतचरितम् (11–15 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण से परिचित हो जायेंगे।
- परिच्छेद 11 में सेवक विहारभद्र रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है। राजा अनन्तवर्मा से वह कहता है कि शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है। इच्छानुसार भोग कीजिए। इसका ज्ञान हो पायेगा।
- परिच्छेद–12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है। अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है कि नीति शास्त्रकार वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं करते, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों के याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया, इसको जानेंगे ।

18.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों! पिछली इकाई में आपने 1–10 परिच्छेद तक का अध्ययन किया और प्रस्तुत इकाई संख्या 18 में आप विश्रुतचरितम् के 11–15 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण का अध्ययन करेंगे । परिच्छेद 11 में रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है, इसके पश्चात् दिन में किए जाने वाले कार्य किये जाते है। राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है, इच्छानुसार भोग करिए। परिच्छेद 12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है, ''वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं करते''। परिच्छेद 13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है। परिच्छेद 14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है। परिच्छेद 15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों को याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया तथा मनुष्य के जीवन में इसका कितना महत्त्व है, इन सब विषयों को समझने में सरलता होगी।

18.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

18.2.1 अनन्तवर्मा को विहारभद्र का उपदेश

अष्टमे पुरोहितादयोऽभ्येत्यैनमाहुः 'अद्य दृष्टो दुःस्वप्नः। दुःस्था ग्रहाः, शकुनानि चाशुभानि। शान्तयः क्रियन्ताम्। सर्वमस्तु सौवर्णमेव होमसाधनम्। एवं सति कर्म गुणवद् भवति। ब्रह्मकल्पा इमे ब्राह्मणाः। कृतमेभिः स्वस्त्ययनं कल्याणतरं भवति। ते चामी कष्टदारिद्र्या बहवपत्या यज्वानो वीर्यवन्तश्चाद्याप्यप्राप्तप्रतिग्रहाः। दत्तं चैभ्यं स्वर्ग्यमायुष्यमरिष्टनाशनं च भवति' इति बहु–बहु दापयित्वा तन्मुखेन स्वयमुपांशु भक्षयन्ति। तदेवमहर्निशमविहितसुखलेशमायासबहुलम् विरलकदर्थनं च नयतो नयज्ञस्यास्तां चक्रवर्तिता स्वमण्डलमात्रमपि दुरारक्ष्यं भवेत्। शास्त्रज्ञसमज्ञातो हि यद् ददाति, यन्मानयति, यत् प्रियं ब्रवीति, तत्सर्वमभिसंधातुमित्यविश्वासः। अविश्वास्यता हि जन्मभूमिरलक्ष्म्याः। यावता च नयेन विना न लोकयात्रा स लोकत एव सिद्धः। नात्र शास्त्रेणार्थः। स्तनंधयोऽपि हि तैस्तैरुपायैः स्तनपानं जनन्या लिप्सते, तदपास्मातियन्त्रणा–मनुभूयन्तां यथेष्टमिन्द्रियसुखानि।

शब्दार्थ–

ब्रह्मकल्पा–बह्म के समान। **स्वस्त्ययनम्**–मंगल स्तुति। **कष्टदारिद्र्यवन्तः**–कष्ट और दरिद्रता वाले लोग। **बह्वपत्या**–बहुत सन्तानों से सम्पन्न। **यज्वानः**–यज्ञ करने वाले लोग। **वीर्यवन्तः**–पराक्रमशाली। **अद्यापि**–आज भी। **अप्राप्तप्रतिग्रहाः**– दान प्राप्त नहीं करने वाले। **स्वर्ग्यम्**–स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला। **आयुष्यम्**–आयु की वृद्धि करने वाला। **अरिष्टनाशनम्**–दुर्भाग्य को नष्ट करने वाला। **बहु–बहु**–बहुत अधिक। **दापयित्वा**–प्रदान कर। **तन्मुखेन**–उनके द्वारा। **अविदितसुखलेशम्**–सुख का लेशमात्र भी न जानने वाले। **आयासबहुलम्**–अत्यधिक कष्ट से भरा हुआ।

अविरलकदर्थनम्–लगातार परेशान होते हुए। **नयज्ञस्य**–नीति अथवा राजनीति जानने वाले राजा की। **चक्रवर्तिता**–चक्रवर्ती बनना। **दुरारक्ष्यम्**–अत्यन्त कठिनता से रक्षा की जाने वाली। **शास्त्रज्ञसमज्ञातः**–राजनीतिज्ञशास्त्र के ज्ञानी के रूप में प्रसिद्ध। **अति संधातुम्**–ठगने के लिए। **अविश्वास्यता**–विश्वास का न किया जाना। **अलक्ष्म्याः**–निर्धनता की दरिद्रता की। **लोकयात्रा**–जीवनयात्रा। **सिद्धः**–मिल जाता है। **अर्थः**–उद्देश्य, प्रयोजन।। **तैस्तै**–उन–उन। **अनुभूयन्ताम्**–अनुभव की जाय। **यथेष्टम्**–अपनी इच्छा से। **इन्द्रियसुखानि**–इन्द्रियों के सुखो को।

अनुवाद –

आठवें पहर में पुरोहित आदि उसके (राजा के) समीप आकर बोलते हैं–आज मैंने एक अत्यन्त बुरा स्वप्न देखा है? इस समय नक्षत्र खराब स्थान पर स्थित हैं तथा शकुन भी अशुभ हुए हैं, इसलिए (यज्ञादि के द्वारा इनकी) शांति की जानी चाहिए। होम (यज्ञानुष्ठान) की पूरी सामग्री सोने की हो, ऐसा होने पर काम (परिणाम) सार्थक हो जाता है।ये ब्राह्मण ब्रह्म के समान हैं। इनके द्वारा किया गया मांगलिक अनुष्ठान अत्यन्त कल्याणप्रद होगा। ये कष्ट तथा दरिद्रता भोग रहे हैं, ये अनेक बाल–बच्चों वाले, यज्ञ करने वाले (अत्यन्त) पराक्रमी हैं तथा इन्होंने आज तक (किसी से) दान भी नहीं लिया हैं। इनको दिया गया दान स्वर्ग को प्रदान कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला तथा दुर्भाग्य का नाशक होगा। इस प्रकार कहकर बहुत–सा धन दिलाकर उनके द्वारा स्वयं ही छिपकर खा लिया जाता हैं। तब इस प्रकार दिन–रात थोड़ा भी सुख प्राप्त किये बिना कष्टों से भरा हुआ, लगातार कष्टों से परिपूर्ण जीवन–यापन करने वाले नीतिज्ञ राजा का चक्रवर्ती बनना तो दूर ही रहा, (उस राजा के लिए तो) अपने राज्य की ही रक्षा करना कठिन हो जाता है। शास्त्रज्ञ के रूप में प्रसिद्ध लोग जो भी (शास्त्रानुसार) परामर्श देते हैं, जो (कुछ भी) राजा का सम्मान करते हैं, जो भी मधुर वाणी बोलता है, (चिकनी–चुपड़ी) बातें बनाते हैं–ये सभी (कार्य उन सीधे–सादे राजाओं को) ठगने के लिए होता है, अतः उन पर विश्वास नहीं होता है। (अपने ऊपर लोगों का) विश्वास न होना दरिद्रता की जन्मभूमि है। जितनी नीति के बिना लोकयात्रा (जीविका) नहीं चल पाती, उतनी नीति तो संसार से ही मालूम हो जाती है। उसके लिए शास्त्र से क्या प्रयोजन? अर्थात् शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। (अपनी माता का) स्तनपान करने वाला शिशु उन–उन साधनों अर्थात् अनेक उपायों से अपनी माता के स्तनों से दूध प्राप्त कर लेता है, इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग कीजिए।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र सेवक होते हुए राजा अनन्तवर्मा से रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है। तथा यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में एवं शास्त्र से क्या प्रयोजन है? इसको वर्णित करता है। उसके अनुसार राजा को शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग करिये।

रात्रि के आठवें भाग में पुरोहित आदि उसके पास आकर कहते हैं कि आज बुरा स्वप्न देखा है। ग्रहों की स्थिति प्रतिकूल है। शकुन बुरे हैं। इसके लिए शान्तिकर्म करना

चाहिए। इसमें सभी पात्र यदि सोने के हों तो परिणाम अत्यन्त उत्तम होगा। उस यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में वे राजा से कहते हैं कि ये ब्रह्मा के समान हैं इनके द्वारा किया गया स्वस्ति पाठ अत्यधिक कल्याणकारी होता है। ये घोर दरिद्रता से पीड़ित और बहुत अधिक सन्तानों वाले हैं। यज्ञ को करने में इन तेजस्वी ब्राह्मणों ने आज तक किसी से दान नहीं लिया है। इनको दिया गया दान स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला और अनिष्ट का नाश करने वाला होता है। इस प्रकार की बातों से राजा को अभिभूत कर उन ब्राह्मणों को खूब दान–दक्षिणा दिलवाते हैं और गुप्त रूप से उनसे अपना हिस्सा लेते हैं। विहारभद्र अनन्तवर्मा से कहता है कि इस प्रकार दिन–रात थोड़े से भी सुख से रहित और परिश्रम की अधिकता से निरन्तर पीड़ित होकर समय बिताते राजा की चक्रवर्तिता तो रही, अपने राज्य मण्डलमात्र की रक्षा करना भी कठिन हो जाता है। इसका कारण वह बतलाता है कि शास्त्रज्ञों की अनुमति से वह जो कुछ दान देता है, जो भी सम्मान देता है, जो भी प्रिय बोलता है, उसकी उन सभी क्रियाओं को लोग सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार अविश्वास राजलक्ष्मी के अभाव का कारण बनता है।

पूर्ण चतुराई से वह राजा को समझाता है कि लोकव्यवहार के लिए जितने ज्ञान की आवश्यकता होती है, उसे तो मनुष्य संसार में स्वयं ही अनुभव से सीख लेता है, इसके लिए शास्त्रों के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं है। एक अबोध शिशु भी विभिन्न उपायों से माता के स्तनपान की अभिलाषा को प्रकट करता है। अतः वह राजा को परामर्श देता है कि वह राजनीति के कारण होने वाले महान् कष्ट को छोड़कर इच्छानुसार इन्द्रियसुखों का भोग करे। कहने का आशय यह है कि इसमें इन्द्रिय सुखों की बात कहकर चार्वाक के सिद्धान्त का अनुसरण करना बताया गया है। क्योंकि चार्वाक का सिद्धान्त है–

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

इस गद्यांश में प्रसादगुण, शान्तरस, अनुप्रास एवं काव्यलिंग अलंकार है। कामफल की प्राप्ति और कल्याण में ब्राह्मणों द्वारा किया गया स्वस्त्ययन अनुष्ठान कारण है, अतः काव्यलिंग अलंकार है।

व्याकरण–

दुःस्वप्नः–दुष्टः, स्वप्नः इति दुःस्वप्नः (कर्मधारय)। **अभेत्य**–अभि+आ+इण्+ल्यप्। **सौवर्णम्**–सुवर्णस्य विकारः सौवर्णम, सुवर्ण+अण्। **होमसाधनम्**–होमस्य साधनम् इसे (षष्ठी तत्पुरुष)।**गुणवत्**–गुणाः विद्यन्ते अस्मिन् इति। **बह्वपत्याः**–बहूनि अपत्यानि, येषां ते बह्वपत्याः (बहुब्रीहि)**वीर्यवन्तः**–वीर्यं विद्यन्ते एषामिति वीर्यवन्तः वीर्य+मतुप्। **स्वर्ग्यम्**–स्वर्ग+यत्+सु। **अरिष्टनाशनम्**–अरिष्टस्य नाशनम् इति अरिष्टनाशनम् (षष्ठी पुरुष)**नियतः**–नी+शतृ प्रत्यय, षष्ठी एकवचन।**नयज्ञस्य**–जानानीति ज्ञः, ज्ञा+क, नयस्य ज्ञः इति नयज्ञः, तस्य नयज्ञस्य।**दुरारक्ष्यम्**–दुःखेन आरक्षितुं रक्ष्यम्। दुर्+आ+रक्ष्+यत्। **अतिसंधातुम्**–अति+सम्+धा+तुमुन्।**अतिसंधातुम्**–अति+सम्+धा+तुमुन्।**अविश्वास्यता**–न विश्वास्यः इति अविश्वास्यः (नञ् तत्पुरुष) तस्य भाव।**लिप्सते**–लब्धुम् इच्छति इति लिप्सते। **अनुभूयन्ताम्**–अनु+भू कर्मवाच्य लोट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन। **यथेष्टम्**–इष्टम् नतिक्रम्य इति यथेष्टम् (अव्ययीभाव समासः)

18.2.2 विहारभद्र द्वारा नीतिशास्त्रकारों की निंदा

येऽप्युपदिशन्ति–'एवमिन्द्रियाणि जेतव्यानि, एवमरिषड्वर्गस्त्याज्यः, सामादिरुपायवर्गः स्वेषु परेषु चाजस्रं प्रयोज्यः, सन्धिविग्रहचिन्तयैव नेयः कालः, स्वल्पोऽपि सुखस्यावकाशो न देयः' इति तैरप्येभिर्मन्त्रिवकैर्युष्मत्तष्चौर्यार्जितं धनं दासीगृहेष्वेव भुज्यते। के चैते वराकाः? येऽपि मन्त्रकर्कशास्त्रतन्त्रकर्त्तार शुक्राङ्गिरसविशालाक्षबाहुदन्तिपुत्रपराशरप्रभृतयस्तैः किमरिषड्वर्गो जितः, कृतं वा तैः शास्त्रानुष्ठानम्? तैरपि हि प्रारब्धेषु कार्येषु दृष्टे सिद्धयसिद्धी। पठन्तश्चापठद्भिरतिसन्धीयमाना बहवः। नन्दिवदमुपपन्नं देवस्य, यदुत सर्वलोकस्य वन्द्या जातिः, अयातयामं वयः, दर्शनीयं वपुः, अपरिमाणा विभूतिः। तत्सर्वं सर्वाविश्वासहेतुना सुखोपभोगप्रतिबन्धिना बहुमार्गविकल्पनात्सर्वकार्येष्वमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन भा कृथा वृथा। सन्तिहिते दन्तिनां दश सहस्त्राणि, हयानां लक्षत्रयम्, अनन्तं च पादातम्। अपि च पूर्णान्येव हेमरत्नैः कोशगृहाणि। सर्वश्चैव जीवलोकः समग्रमपि युगसहस्त्रं भुञ्जानो न ते कोष्ठागाराणि रेचयिष्यति। किमिदमपर्याप्तं यदन्यार्जितायासः क्रियते। जीवितं हि नाम जन्मवतां चतुःपंचाप्यहानि। तत्रापि भोगयोग्यमल्पाल्पं वयः खण्डम्। अपण्डिताः पुनर्जयन्त एव ध्वंसन्ते। नार्जितस्य वस्तुनो लवमप्यास्वादयितुमीहन्ते।

शब्दार्थ–

ये अपि–जो आप लोग भी। **उपदिशन्ति**–उपदेश देते है। **जेतव्यानि**–जीती जानी चाहिए। **सामादिरुपायवर्गः**–साम आदि उपायों का **समूह**–साम, दाम, दण्ड, भेद का समूह। **स्वेषु**–अपने लोगों पर। **परेषु**–शत्रु पक्ष के व्यक्तियों पर। **अजस्त्रम्**–लगातार। **प्रयोज्यः**–प्रयोग करना चाहिए। **सन्धिविग्रहचिन्तया**–सन्धि और संग्राम की चिन्ता से। **नेयः कालः**–समय व्यतीत करना चाहिए। **मन्त्रिवकै**–बकुलों के समान धोखेबाज। **युष्मत्तः**–आपसे। **चौर्यार्जितम्**–चोरी से प्राप्त किया गया। **दासीगृहेषु**–दासियों के घरों में। **भुज्यते**–भोगा जाता है। **वराकाः**–बेचारे। **मन्त्रकर्कशा**–मन्त्रों के सम्बन्ध में अति कठोर नियमों का अनुसरण कर जीवन व्यतीत करने वाले। **शास्त्रतन्त्र कर्त्तारः**–शास्त्रों एवं तन्त्रशास्त्रों के रचयिता। **शुक्राङ्गिरसविशालाक्षबाहुदन्तिपुत्रपराशरप्रभृतयः**–शुक्र, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र तथा पराशर आदि–शुक्र ने शुक्रनीति, अङ्गिरस अर्थात् बृहस्पति ने बृहस्पति स्मृति, विशालाक्ष अर्थात् शिव ने शिवस्मृति तथा पराशर ने पराशरस्मृति की रचना की थी। **शास्त्रानुष्ठानम्**–शास्त्रों का अनुसरण या पालन। **प्रारब्धेषु**–भाग्यो में। **दृष्टे**–देखी गयी है। **सिद्धयसिद्धीः**–सफलता और असफलता। **अतिसन्धीयमानाः**–ठगे जाते हुए। **बहवः**–अनेक लोग। **नन्दिवदमुपपन्नं देवस्य**–देव के क्या आपकी ये बाते मिली नहीं है। **सर्वलोकस्य वन्द्या**–सभी व्यक्तियों के द्वारा वन्दनीय अथवा पूजनीय। **जातिः**–कुल। **अयातयामम्**–जिसके उपभोग का काल अभी समाप्त नहीं हुआ है। **वयः**–अवस्था। **वपुः**–शरीर। **अपरिमाणा**–असीमित। **विभूतिः**–ऐश्वर्य। **तत्सर्वं**–उन सभी को। **सर्वाविश्वासहेतुना**–सभी लोगों के अविश्वास का कारण या हेतु। **तन्त्रावापेन**–तन्त्र अर्थात् राष्ट्र सम्बन्धी विचार विमर्श करना और देखभाल करना तथा आवाप अर्थात् शत्रुओं के विषय में विचार करने के द्वारा। **हयानाम्**–घोड़ों का। **अनन्तम्**–अनन्त। **पादातम्**–पैदल सेना। **कोशगृहाणि**–कोशगृह। **जीवलोकः**–जीवलोक। **युगसहस्त्रं**–हजार युगों तक। **भुंजानः**–खाता हुआ। **कोष्ठागाराणि**–अन्नभण्डारगृह। **रेचयिष्यति**–रिक्त नहीं करेगा। **आयास**–प्रयास।

जीवितम्–जीवन। **अहानि**–दिनो को। **भोगयोग्यम**–भोग करने में योग्य। **अल्पाल्पम्**–बहुत कम। **वयः खण्डम्**–आयु का भाग। **अपण्डिताः**– मूर्खता। **ध्वंसन्ते**–ध्वंस हो जाते हैं। **वस्तुनः**–वस्तुओं का। **लवमपि**–थोड़ा भी। **आस्वादयितुम्**–स्वाद लेने के लिए। **ईहन्ते**–इच्छा करते हैं।

अनुवाद –

जो (व्यक्ति राजा को) ऐसा उपदेश देता 'इस भाँति इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की जानी चाहिए।' इस भाँति छः शत्रुओं (कामक्रोधादि) को त्यागना चाहिए, साम आदि (साम, दाम, दण्ड, भेद) उपायों का प्रयोग अपने शत्रु पक्ष के लोगों पर निरन्तर किया जाना चाहिए, सन्धि और विग्रह की चिन्ता में ही समय बिताना चाहिए, तनिक सा (क्षणमात्र) भी सुख को अवकाश नहीं दिया जाना चाहिए, ऐसे उन बगुला सदृश मन्त्रियों द्वारा आपके चोरी द्वारा पैदा किया गया हुआ धन, वेश्याओं के घरों में ही भोगा जाया करता है (अर्थात् ये बगुला–भगत उपदेशक मन्त्री आदि राज्य से चोरी करके प्राप्त किये हुए धन से वेश्याओं के घरों को भर दिया करते है और आनन्द लूटा करते हैं।) अब ये बेचारे (तो) क्या है? और जो ये नीतिशास्त्रकार तथा तन्त्रशास्त्रकार शुक्राचार्य, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र, पराशर इत्यादि थे, क्या इन लोगों के द्वारा छः शत्रुओं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) पर विजय प्राप्त कर ली गयी थी? क्या उनके द्वारा शास्त्र का अनुष्ठान किया गया था? (अर्थात् क्या वे लोग शास्त्रानुसार चलते थे?) क्या प्रारम्भ किये हुए कार्यों में उनके द्वारा भी सिद्धियाँ (सफलताएँ) अथवा असिद्धियाँ (असफलताएँ) पहले से ज्ञात कर ली गयी थीं। पहले से पढ़े–लिखे लोग (भी) न पढ़े–लिखे लोगों द्वारा ठग लिए जाया करते हैं।देव को (महाराज को) ये (वस्तुएँ तो) प्राप्त ही है–सम्पूर्ण लोक द्वारा वन्दनीया जाति (कुल वंश), नवीन आयु, दर्शनीय शरीर तथा असीम ऐश्वर्य, अतः इन सबको स्वराष्ट्र–चिन्ता (तन्त्र) तथा पदचिन्ता के द्वारा व्यर्थ न कीजिए जो सभी लोगों के अविश्वास के कारण हैं, जो सुखों के उपभोगों के विरोधी हैं, जो अनेक मार्गों के बताने के कारण सभी कार्यों में संशय उत्पन्न करने वाले हैं। आपके पास दस हजार हाथी हैं, तीन लाख घोड़े हैं और असंख्य पैदल सिपाही (सेना) है और अपना कोष (खजाना) सुवर्ण तथा रत्नों से भरा पड़ा है। समस्त प्राणिवर्ग हजारों युगों तक खाता हुआ भी आपके भण्डार गृहों को खाली नहीं करेगा। (अर्थात् नहीं कर सकता है।) क्या यह प्र्याप्त नहीं कि और (भी) अधिक उपार्जन करने के निमित्त प्रयत्न किया जाता है (अर्थात् किया जाये)? (क्या आपके पास पर्याप्त धन नहीं है, जो आप और अधिक धन पैदा करने के लिए प्रयत्न करेंगे?) (संसार में) जन्म लेने वाले प्राणियों का जीवन तो चार–पाँच दिन का ही होता है (अर्थात् मानव जीवन अस्थायी हुआ करता है)। उसमें भी भोग विलास करने योग्य जो आयु का भाग हुआ करता है, वह तो (और भी) स्वल्पातिस्वल्प ही हुआ करता है। फिर मूर्ख लोग तो (धन) पैदा करते ही करते मर जाया करते हैं।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में सेवक विहारभद्र यह अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह राजनीति ज्ञान सम्बन्धी नियमों को बताने एवं लिखने वाले नीतिशास्त्रकार तथा तन्त्रशास्त्रकारों की व्यापक रूप से भर्त्सना की है और राजा

को यह बताने का प्रयास किया है कि ये नीतिशास्त्रकार नियम तो बना देते है क्या स्वयं ये पालन करते है।

विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि जो भी इन्द्रियों को जीतने, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि अरिषड्वर्ग को त्यागने, अपने और शत्रुपक्ष के लोगों में निरन्तर सामादि उपायों का प्रयोग करने और सन्धि–विग्रह की चिन्ता के द्वारा समय बिताने और थोड़े से भी सुख का अवसर न देने का उपदेश देते हैं, मन्त्रीरूपी उन बगुलों के द्वारा आप से चोरी से अर्जित किया गया धन ,दासियों के घरों में भोगा जाता है।

राजनीतिशास्त्रकारों का उपहास करते हुए वह कहता है कि राजनीति के क्रूर सिद्धांतो का प्रतिपादन करने वाले ये शुक्र, आङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र आदि बेचारे हैं कौन? क्या इन्होंने स्वयं अरिषड्वर्ग को जीता था अथवा क्या उन्होंने शास्त्रों के अनुसार व्यवहार किया था। उनके द्वारा भी प्रारम्भ किए गए कार्यों में सफलता और असफलता देखी गई थी। राजनीति के सिद्धांतों को जानने वाले बहुत से लोग, इनके ज्ञान से शून्य लोगों के द्वारा ठगे गए हैं।

पुनः वह अनन्तवर्मा को भोगोन्मुखी बनाये रखने के लिए प्रशंसा करते हुए वह कहता है कि आप सम्पूर्ण लोक में सम्माननीय वंश में उत्पन्न हुए हैं, युवा हैं, सुन्दर शरीर और अपरिमित ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं। इन सबको सारे अविश्वास के हेतु और सुखों के उपभोग में बाधा उत्पन्न करने वाले, अनेक विकल्पों के होने से सभी कार्यों में संशय युक्त तन्त्रावाप (स्व और परराष्ट्र की चिन्ता) के द्वारा व्यर्थ मत कीजिए।

राजा को आश्वस्त करने की दृष्टि से वह कहता है कि आपके पास दस हजार हाथी, तीन लाख घोड़े और असंख्य पैदल सैनिक हैं। आपका कोश स्वर्ण और रत्नों से भरा हुआ है। यह सारा प्राणीलोक अगर हजार युगों तक भी उसका भोग करता रहे तो समाप्त नहीं होगा। फिर वह राजा से कहता है कि मनुष्य का जीवन बहुत छोटा होता है, उससे भी भोग के योग्य आयु (युवावस्था) बहुत कम होती है। वे मूर्ख होते हैं जो आजीवन केवल धन अर्जित करते रहते हैं। उसका भोग करने की लेशमात्र भी इच्छा नहीं करते अर्थात् कहने का आशय यह है कि नीतिशास्त्रकारों के द्वारा प्रणीत सभी नियम अनुचित एवं व्यर्थ है। उनका पालन करने से कोई लाभ नहीं होता है बल्कि सदाचारी एवं नियम पालन करने वाला व्यक्ति धूर्त मंत्रियों एवं दरबारियों के द्वारा ठगा जाता है इसलिए हे महाराज! आप भोग विलास करने योग्य चीजों का भोग करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाइये। इस प्रकार वह राजा को उचित मार्ग से अनुचित मार्ग की तरफ प्रेरित करता हैं।

इसमें में प्रसादगुण, शान्तरस, अनुप्रास अलंकार और चोरी से अर्जित धन वेश्याओं के घर धन से भरे जाने में हेतु होने से काव्यलिंग अलंकार है। इसमें सन्देह अलंकार भी है जिसका लक्षण है **'सन्देहः प्रकृतेऽन्यस्य संशयः प्रतिभोत्थितः।**

व्याकरण–

जेतव्यानि–जि+तव्य+द्वितीयाबहुवचन।**त्याज्यः**–त्यज्+ण्यत्+सु।**प्रयोज्यः**–प्र+युज्+यत्+सु। **सन्धि**–सम्+धा+कि।**नेयः**–नी+यत्+सु। **युष्मत्**–युष्मद्+तसिल्। **अर्जितम्**–अर्ज+क्त+सु। **प्रारब्धेषु**– प्र+आङ्+रभ्+क्त+सुप्। **दृष्टे**–दृश्+क्त+टाप्+औ। **अतिसन्धीयमाना**– अति+सम्+धा+शानच्। **विभूतिः**–वि+भू+क्तिन्+सु। **प्रतिबन्धी**–प्रति+बन्ध्+णिनि। **पादातम्**–पदाति+अण्+अम्। **युगसहस्त्रम्**–इसमें

'कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे' सूत्र **भुंजानः**– भुज+शानच्+सु। **अर्जनाय**–अर्जन्+ल्युट्। **जीवितम्**–जीव+क्त+अम्। **जन्मनाम्**–जन्मन्+इति+आम्। **आस्वादयितुम्**–आङ्+स्वद्+तुमुन्।

18.2.3 विहारभद्र का अनन्तवर्मा को स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव

किं बहुनाः, राज्यभारं भारक्षमेष्वन्तरङ्गेषु भक्तिमत्सु समर्प्य, अप्सरः प्रतिरूपाभिरन्तः पुरिकाभी रममाणो गीतसंगीतपानगोष्ठीश्च यथर्तु बध्नन् यथार्हं कुरु शरीरलाभम्, इति'' पंचाङ्गीमृष्टभूमिरंजलिचुम्बितचूडश्चिरमशेत। प्राहसीच्च प्रतिफुल्ललोचनोऽन्तः पुरप्रमदाजनः।जननाथश्च सस्मितम् 'उतिष्ठ, ननु हितोपदेशाद् गुरवो भवन्तः। किमिति गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्' इति तमुत्थाप्य क्रीडानिर्भरमतिष्ठत्।

शब्दार्थ–

किं बहुनाः–अधिक कहने से क्या लाभ। **भारक्षमेषु**–राज्य का भारवहन करने में सक्षम लोगों पर। **अन्तरङ्गभूतेषु**–विश्वास पात्र लोगों पर। **समर्प्य**–सौंपकर। **अप्सरः प्रतिरूपाभिरन्तः**–अप्सराओं के समान सुन्दर स्त्रियों के साथ। **अन्तःपुरिकाभी**–अन्तः पुर की महिलाओं के साथ। **पान**–मदिरा का पान। **गोष्ठी**–मण्डली। **यथर्तु**–ऋतु अर्थात् समय के अनुसार। **बध्नन्**–करते हुए। **यथार्हं**–सार्थक। **शरीरलाभम्**–जन्म। **पंचाङ्गीमृष्टभूमि**–शरीर के पाँच अंग। **प्राहसीच्च**– हँस दिया। **प्रतिफुल्ललोचनः**–प्रसन्नता से पूर्णता विकसित नेत्रो वाले। **प्रमदाजनः**–महिलायें। **सस्मितम्**–थोड़ी हँसी के साथ। **हितोपदेशाद्**–कल्याणकारी उपदेश के कारण। **गुरवः**–महान। **किमिति**–क्यों। **गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्**–महानता के विरुद्ध। **उत्थाप्य**–उठाकर। **क्रीडानिर्भरमतिः**–भोग–विलास में तल्लीन बुद्धि वाला राजा।

अनुवाद –

अधिक कहने से क्या लाभ? भारवहन करने में सक्षम, स्वयं के प्रति श्रद्धा रखने वाले तथा विश्वासपात्र मन्त्री आदि लोगों को (राज्य का कार्यभार) सौंपकर अप्सराओं के समान सुन्दर अन्तःपुर की नारियों के साथ भोग–विलास करते हुए, ऋतु (समय) के अनुसार गीत–वाद्य, मदिरापान के साथ मित्रगोष्ठी (का आयोजन) करते हुए शरीरलाभ (इस जन्म) को सार्थक करें। इस प्रकार कहकर (शरीर के) पांचों अंगों से भूमि को स्पर्श करता हुआ, मस्तक पर दोनों हाथ जोड़कर विहारभद्र बहुत काल तक (लेटा) सोता रहा। प्रसन्नता के कारण विकसित आँखों वाली रानिवास की महिलायें (भाव–विभोर होकर) हँस पड़ीं। थोड़ी हँसी (मुस्कुराहट) के साथ राजा ने भी उठिये, कल्याणकारी उपदेश देने के कारण आप (मेरे) गुरु हैं। आपने महानता (बडप्पन) के विरुद्ध व्यवहार क्यों किया? इस प्रकार कहकर, उसे उठाकर (अपने भी) भोग–विलास के रस मे डूब गया अर्थात् स्वयं भीं भोग–विलास करने लगा।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र राजा को परामर्श देता है कि–हे राजन! अनन्तवर्मा आप भी राज्य के राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक बातों पर ध्यान न दे करके राज्य के रमणीय वस्तुओं का भोग करिये।

विहारभद्र सेवक कहना चाहता है कि वह राज्य का भार विश्वस्त लोगों पर सौंप दे और अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ रमण करते हुए ऋतुओं के अनुसार गीत–संगीत और (मद्य) पान की सभाओं का आयोजन करते हुए सुख का अनुभव करे, यह कहकर वह साष्टांग भूमि पर लेट गया। राजा तथा अन्तःपुर की स्त्रियाँ उसकी इस चेष्टा पर हँस पड़ते है। राजा की प्रकृति ही भोगपरक थी। अतः वह विहारभद्र की बातों को अपने लिए हितकारी मानते हुए उसे अपना गुरु घोषित करता है। वह उसके मतानुसार व्यवहार करते हुए राजनीति तथा वसुरक्षित, दोनों की अवहेलना करने लगता है। इस प्रकार आप राज्य पर किसी भी प्रकार का ध्यान न दीजिए। इस प्रकार राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहारभद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश को सुनकर थोड़ी मुस्कुराहट के साथ उसको अपना गुरु मानकर और उसे महत्त्व देकर जमीन से उठाया और भोग–विलास के रस में डूब गया तथा वृद्ध मंत्री वसुरक्षित का अपमान करने लगा।

इस गद्यांश में माधुर्य एवं प्रसादगुण, श्रृंगार रस तथा अनुप्रास अलंकार है। आप मेरे गुरु हैं–इसमें हितोपदेश करना हेतु होने से काव्यलिंग अलंकार है। इसके अतिरिक्त शान्तरस एवं हास्य रस भी है। काव्यलिंग एवं संसृष्टि अलंकार है, जिनका लक्षण है– **'यद्येत एवालङ्काराः परस्परविमिश्रिताः तदा पृथगलङ्कारौ संसृष्टिः।**

व्याकरण–

भारक्षमेषु–भारे क्षमाः इति भारक्षमाः तेषु भारक्षमेषु।**अन्तरङ्गभूतेषु**–अन्तः अंगम् इति अन्तरंगम्, अन्तरंगभूताः इति अन्तरंगभूता तेषु इति अन्तरंगभूतेषु। **अप्सरप्रतिरूपाभिः**–अप्सरसां इव प्रतिरूपं यासां ता अप्सरः प्रतिरूपाः ताभिः। **गीतसंगीतपानगोष्ठी**–गीतं च संगीतं च पानं च इति गीतसंगीत पानानि (द्वन्द्व), तेषां गोष्ठयः इति गीत संगीतपानगोष्ठयः ताः गीतसंगीतपानगोष्ठीः।**यथार्हम्**–यथा अहं यस्य सः यथार्हः तम् (बहुब्रीहि)।**अजंलिचुम्बितचूडः**–अंजलिना चूम्बिता चूड़ा येन सः (बहुब्रीहि)। **प्रीतिप्रफुल्ललोचनः**–प्रीत्या फुल्लानि, विकसितानि लोचनानि यस्य सः (बहुब्रीहि)। **प्रमदानजनः**–प्रमदानां जनः इति षष्ठी तत्पुरुष।**सस्मितम्**–विद्यमानं स्मित सस्मिन् कर्मणि तत्।**हितोपदेशात्**–हितस्य उपदेश (षष्ठी तत्पुरुष) हितोपदेशः तस्मात्। **क्रीडारसनिर्भरमतिः**–क्रीडायाः रसः (षष्ठी तत्पुरुष) तस्मिन् निर्भरा मतिः यस्य सः (बहुब्रीहि)।**अचितज्ञः**–जानातीतिज्ञः चित्तस्यज्ञः इति चित्तज्ञः (षष्ठी तत्पुरुष) न चित्तज्ञः अचितज्ञः (नञ् तत्पुरुष)।**उत्थाप्य**–उत्+स्था+णिच्+ल्यप्।

18.2.4 अनन्तवर्मा द्वारा मंत्री वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा

अथैषु दिनेषु भूयोभूयः प्रस्तुतेऽर्थे प्रेर्यमाणो मन्त्रिवृद्धेन वचसाभ्युपेत्य मनसैवाचित्तज्ञ इत्यवज्ञातवान्। अथैवं मन्त्रिणो मनस्यभूत्–''अहो मे मोहाद् बालिश्यम्। अरुचितेऽर्थे चोदयन्नर्थीवाक्षिगतोऽहमस्य हास्यो जातः। स्पष्टमस्य चेष्टानामयथापूर्व्यम्। तथाहि। न मां स्निग्धं पश्यति, न स्मितपूर्वं भाषते, न रहस्यानि विवृणोति, न हस्ते स्पृशाति, न व्यसनेष्वनुकम्पते, नोत्सवेष्वनुगृह्णाति, न विलोभनवस्तूनि प्रेषयति, न मत्सुकृतानि प्रगणयति, न

मे गृहवार्तां पृच्छति, न मत्पक्ष्यान् प्रत्यवेक्षते, न मामासन्नकार्येष्वभ्यन्तरीकरोति, न मामन्तःपुरं प्रवेशयति। अपि च– मामनर्हेषु कर्मसु नियुङ्क्ते, मदासनमन्यैरवष्टभ्यमानमनुजानति, मद्वैरिषु विश्रम्भं दर्शयति मदुक्तस्योत्तरं न ददाति, मत्समानदोषान् विगर्हयति, मर्मणि मामुपहसति, स्वमतमपि मया वर्ण्यमानं प्रतिक्षिपति, महार्हाणि वस्तूनि मत्प्रहितानि नाभिनन्दति, नयज्ञानां स्खलितानि मत्समक्षं मूर्खैरुद्घोषयति।

शब्दार्थ–

भूयोभूयः–पुनः–पुनः। **प्रेर्यमाणो**–प्रेरित किया जाता हुआ। **अचित्तज्ञः**–चित्त की वृत्ति को न जानने वाला। **अवज्ञानवान्**–तिरस्कार किया। **मोहात्**–अज्ञानता के कारण। **बालिश्यम्**–मूर्खता। **अरुचिते अर्थे**–ऐसा कार्य जो अच्छा नही लगता। **चोदयन्**–प्रेरित करता हुआ। **अक्षिगतः**–द्वेष का पात्र। **न विवृणोति**–नहीं बतलाता। **व्यसनेशु**–विपत्तियो में। **न अनुकम्पते**–दया नहीं दिखलाता। **विलोकन वस्तूनि**–लुभाने वाली वस्तुएँ। **सुकृतानि**–उत्तम कार्यों को। **न प्रगणयति**–नहीं गिनता। **न अवेक्षते**–नहीं देखता है। **आसन्नकार्येषु**–निकटतम कार्यों में गोपनीय कार्यों में। **न अभ्यन्तरी करोति**–विश्वास नहीं करता। **अनुजानाति**–स्वीकृति दे देता है। **अवष्टम्य मानम्**–दखल दिया जाता हुआ। **विश्रम्भम्**–विश्वास। **विगर्हयति**–निन्दा करता है। **वर्ण्यमानम्**–वर्णन किया जाता हुआ। **प्रतिक्षिपति**–आक्षेप करता है। **महार्हाणि**–बहुमूल्य। **यत्प्रतिहतानि**–मेरे द्वारा भेजी हुई। **न अभिनन्दति**–स्वागत नहीं करता है। **स्खलितानि**–दोषों को।

अनुवाद –

इन दिनों उपस्थित कार्यों में पुनः पुनः मन्त्रिवृद्ध के द्वारा प्रेरित किया जाता हुआ, वाणी से स्वीकार करके, मन में (यह मेरे) चित्त को जानने वाला नहीं है, ऐसा (सोचकर अनन्तवर्मा उसका) तिरस्कार करने लगा। तब मन्त्री के मन में (इसे) प्रेरित करता हुआ मैं, आँखों में खटकने वाले भिखारी के समान इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। यह तो स्पष्ट ही है कि इसका व्यवहार पूर्ववत् नहीं है। जैसे कि यह मुझे स्नेहपूर्वक नहीं देखता है, न मुस्कुराते हुए बात करता है, न गुप्त बातों को बतलाता है, न हाथ से स्पर्श करता है, न विपत्तियों में सहानुभूति प्रदर्शित करता है, न उत्सवों में अनुग्रह करता है, न आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भिजवाता है, न मेरे अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर के समाचार को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों को अनुग्रहपूर्वक देखता है, न उपस्थित कार्यों में मुझ पर विश्वास करता है, न अन्तःपुर में मुझे प्रवेश कराता है। और भी, अयोग्य कार्यों में मुझे नियुक्त करता है, मेरे आसन पर अन्य व्यक्तियों द्वारा अधिकार किये जाने की आज्ञा देता है, मेरे दुश्मनों के प्रति विश्वास दिखलाता है। मेरे द्वारा कही गयी बातों का उत्तर नहीं देता। मुझ जैसे निर्दोष लोगों की निन्दा करता है, मेरा मर्मपीड़ापरक उपहास करता है, मेरे द्वारा वर्णन किए जाते हुए, अपने मत का भी, तिरस्कार करता है, मेरे द्वारा भेजी गई बहूमूल्य वस्तुओं का अभिनन्दन नहीं करता, नीतिज्ञों की भूलों को मेरे समक्ष मूर्खों के द्वारा उद्घोषित करवाता है।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है।

वसुरक्षित स्नेहवश हितकामना से राजा को राजनीति में रुचि लेने का परामर्श देता है। अनन्तवर्मा उसकी बातों से प्रभावित होता है और तदनुसार व्यवहार करने का वचन देता है, किन्तु विहारभद्र अपनी चाटुकारितापूर्ण बातों से अनन्तवर्मा को पुनः राजनीति और वसुरक्षित दोनों से विमुख कर देता है। अनन्तवर्मा के व्यहार में आए हुए परिवर्तन को वसुरक्षित अनुभव कर लेता है और सोचता है कि मैं मोहवश कैसी मूर्खता कर रहा हूँ। राजनीति में इसकी रुचि नहीं है और मैं इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। इसका व्यवहार अब पहले के समान नहीं रहा, न ही मुझे प्रेम से देखता है, न मुस्कुराकर बोलता है, न रहस्यों को प्रकट करता है, न उपहाररूप में प्राप्त आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भेजता है, न मेरे द्वारा किए गए अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर की वार्ता को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों की ओर देखता है, न अत्यन्त गोपनीय कार्यों में सम्मिलित करता है और न ही अन्तःपुर में मुझे प्रवेश करवाता है। इतना ही नहीं, वसुरक्षित यह भी अनुभव करता है, उसके शत्रुओं पर वह विश्वास प्रदर्शित करता है। उसके वचनों का उत्तर नहीं देता है। उसके समान निर्दोष लोगों की निन्दा करता है और उसके मर्म का उपहास करता है।

संस्कृत व्याकरण–

प्रेर्यमाणः–प्र+इट्+शानच्। **अभ्युपेत्य**–अभि+उप्+इण्+ल्यप्। **अवज्ञातवान्**–अव+ज्ञा+क्तवतु। **बालिष्यम्**–बालिशस्य भावः कर्म वा बालिश्यम्। बालिश+ष्यञ्। **हास्यः**–हस्+ण्यत्। **अयथापूर्व्यम्**–पूर्वम् अन्तिक्रम्य इति यथापूर्वम् (अद्वयीभाव) न यथापूर्वम्, इति अयथापूर्वम् (नञ् तत्पुरुष), अयथा पूर्वस्य भावः इति आयथापूर्व्यम् (अथवा पूर्व+ष्यञ्)। **विलोमन वस्तूनि**–विलोमनानि च तानि वस्तूनि इति विलोमन वस्तूनि (कर्मधारय)। **पक्ष्यान्**–पक्षे भवाः पक्ष्याः। **पक्ष्य**–पक्ष+यत्। **आसन्न कार्येषु**–आसन्नानि च तानि कार्याणि इति आसन्न कार्याणि तेषु आसन्नाकार्येषु (कर्मधारय) **अवष्टम्भमानम्**–अव+स्तम्भ्+कर्मणि शानच्। **वर्ण्यमानम्**–वर्ण+शानच्। **महार्हाणि**–महान् अर्हः येषां तानि महार्हाणि (बहुवचन)

18.2.5 वसुरक्षित द्वारा तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय

सत्यमाह चाणक्यः–'चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः। दक्षिणा अपि तदभावबहिष्कृता द्वेष्या भवेयुः इति। तथापि का गतिः। अविनीतोऽपि न परित्याज्यः पितृपैतामहैरस्मादृशैरयमधिपतिः। अपरित्यजन्तोऽपि कमुपकारमश्नूयमाणवाचः कुर्मः। सर्वथा नयज्ञस्य वसन्तभानोरश्मकेन्द्रस्य हस्ते राज्यमिदं पतितम्। अपि नामापदो भाविन्यः प्रकृतिस्थमेनमापादयेयुः। अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु क्वचिदुत्पन्नोऽपि द्वेषः सद्वृत्तमस्मै न रोचयेत्। भवतु भविता तावदनर्थः। स्तम्भितपिशुनजिह्वो यथाकथंचिदभ्रष्टपदस्तिष्ठेयम् इति।

शब्दार्थ–

चित्तज्ञानानुवर्तिनः–राजा के चित्त को ज्ञान करके अनुवर्तन करने वाले। **द्वेष्याः**–शत्रु। **भाविन्यः**–भविष्य में होने वाली। **सुलभव्यलीकेषु**–जिनमें दुःख मिलना बहुत सरल तथा स्वाभाविक है, ऐसे अनर्थों में। **पिशुन**–चुगलखोर। **यथाकथचिंत्**–जिसे किसी भी

प्रकार। **अभ्रष्टपदः** जिसका मन्त्रिपद भ्रष्ट न हो ।

अनुवाद –

चाणक्य ने सत्य कहा है–मन के भावों को जानकर व्यवहार करने वाले लोग अनिष्टकारी होने पर भी प्रिय होते हैं। उसके मन के भावों के बाहर रहने वाले, निपुण होने पर भी द्वेष के योग्य होते हैं। फिर भी क्या उपाय है? अविनीत होने पर भी यह राजा , पिता और पितामह के सदृश हम जैसों के द्वारा परित्याग के योग्य नहीं है। परित्याग न करते हुए भी, न सुने जाते हुए वचनों वाले हम क्या उपकार करेंगे? नीतिज्ञ अश्मकराज वसन्तभानु के हाथ यह राज्य पूर्णतया गया हुआ (समझो)। सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकट इसे प्रकृतिस्थ (विवेकबुद्धि से युक्त) बना दें। अथवा सरलता से कष्ट देने वाली विपत्तियों में, उत्पन्न हुआ द्वेष, कहीं इसके लिए सदाचार को रुचिकर न बनाये (अर्थात् कहीं इसे सदाचार से अरुचि न हो जाए) अस्तु, अनर्थ तो होगा ही। चुगली करने वाली जीभ को वश में करके किसी प्रकार, (अपने) पद में च्युत न हुआ, स्थित रहूँ।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों कों याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया।

ऐसा नहीं है कि राजा केवल वसुरक्षित के विचारों की ही अवहेलना करता था, अपितु उसके द्वारा कहे गए अपने मत का भी तिरस्कार करता था। वसुरक्षित आचार्य चाणक्य के मत को स्मरण करता है, जिसके अनुसार जो लोग राजा के मन के अनुकूल व्यवहार करने वाले होते हैं, वे अहितकारी होते हुए भी प्रिय होते है–**चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः।** जबकि उसका हित चाहने वाले, उसके मन के विपरीत आचरण करने वाला होने से ईर्ष्या के पात्र बन जाते हैं। कुलपरम्परा से राजसेवा में रत रहने के कारण, इतना अपमानित होने पर भी वसुरक्षित, राजा का परित्याग करने में स्वयं को विवश पाता है–**तथापि का गति। अविनोतोऽपि न परित्याज्यः।** यद्यपि वह यह भी जानता है कि जब राजा उसके वचनों की ओर ध्यान नहीं देता, तो वह भला उसका क्या उपकार कर पायेगा। नीतिज्ञ अश्मकराज, वसन्तभानु की वक्रदृष्टि विदर्भ पर है और वह इस राज्य पर अपना अधिकार स्थापित करके ही रहेगा, ऐसी आंशका उसके मन में व्याप्त होने लगती है। वह अपने मन को आश्वासन देता है कि सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकटो के कारण अनन्तवर्मा राजनीति में रुचि लेने लगे अथवा सहज पीड़ा से युक्त उन स्थितियों में उत्पन्न हुए द्वेष के कारण दण्डनीति इसे रुचिकर ही न लगे। परिस्थितियों से मानों हार मानते हुए वह कहता है कि अनर्थ तो अवश्यम्भावी है। अच्छा है कि अपनी वाणी को वश में रखते हुए मैं अपने पद पर बना रहूँ।

संस्कृत व्याकरण–

चित्तज्ञानानुवर्तिनः–चित्तस्य ज्ञानम् इति चित्त ज्ञानम् (षष्ठी तत्पुरुष) चित्तज्ञानं अनुवर्तितुं शीलं प्रेषाम् ते इति चित्तज्ञानानुवर्तिनः (उपपद तत्पुरुष) **तद्भाव**

बहिष्कृताः—तस्य भावाः इति तद्भावाः (षष्ठी तत्पुरुष) ताद्भावेभ्यः बहिष्कृताः इति तद्भाव बहिष्कृताः (पंचमी तत्पुरुष) **अभ्रष्टपदः**—न भ्रष्टपदं यस्य सः (बहुव्रीहि)।

बोध प्रश्न—1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें

I. राजा अनन्तवर्मा रात्रिचर्या के अष्टम भाग में क्या करता था? (आय व्यय विवरण /पुरोहितो के द्वारा दुःस्वप्न वृतान्त)

II. दुःस्वप्न को नष्ट करने का क्या उपाय है? (शान्तिकर्म/प्रायश्चित कर्म)

बोध प्रश्न—2

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

I. शान्तिकर्म में दिया गया दान .....कराने वाला है। (स्वर्ग को प्राप्त/नरक को प्राप्त)

II. दरिद्रता की जन्मभूमि ..... है। (अविश्वास/ विश्वास)

बोध प्रश्न 3

1. अनन्तवर्मा मंत्री वसुरक्षित का किस प्रकार तिरस्कार करता है ?

.....

.....

.....

.....

.....

2. अनन्तवर्मा द्वारा तिरस्कृत वसुरक्षित क्या महसूस करता है ?

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1. अनन्तवर्मा द्वारा वसुरक्षित के तिरस्कार को अपने शब्दों में लिखिए।

18.3 सारांश

विश्रुतचरितम् 11—15 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण खण्ड—4 के अन्तर्गत आता है। परिच्छेद 11 में रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है, इसके पश्चात् दिन में किए जाने वाले कार्य किये जाते है। इस प्रकार सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि—शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है। इच्छानुसार भोग करिए। परिच्छेद 12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं

करते। परिच्छेद 13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है। परिच्छेद 14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है। परिच्छेद 15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों के याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया। इन सबका मनुष्य के जीवन में कितना महत्त्व है, इन सब विषयों को समझने में सरलता हुई।

18.4 शब्दावली

स्वीकृति देना – अनुमति देना

सम्मिलित नहीं करता – विश्वास नहीं करता

आँखों में चुभने वाला – द्वेष किये जाने वाला योग्य या खटकने वाला

दक्षिणा – राजा के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति से युक्त नीतिज्ञ

चित्तज्ञानुवर्तिन – चित्त अथवा मन के विकार को समझकर अनुकूल व्यवहार करने वाला

18.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन ,जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस ,शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

18.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) पुरोहितो के द्वारा दुःस्वप्न वृतान्त (ii) शान्तिकर्म

बोध प्रश्न–2

2. (i) स्वर्ग को प्राप्त (ii) अविश्वास

बोध प्रश्न 3

1 वसुरक्षित स्नेहवश हितकामना से राजा को राजनीति में रुचि लेने का परामर्श देता है। अनन्तवर्मा उसकी बातों से प्रभावित होता है और तदनुसार व्यवहार करने का वचन देता है, किन्तु विहारभद्र अपनी चाटुकारितापूर्ण बातों से अनन्तवर्मा को पुनः राजनीति और वसुरक्षित दोनों से विमुख कर देता है। अनन्तवर्मा के व्यवहार में आए हुए परिवर्तन को वसुरक्षित अनुभव कर लेता है और सोचता है कि मैं मोहवश कैसी मूर्खता कर रहा हूँ ? राजनीति में इसकी रुचि नहीं है और मैं इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। इसका व्यवहार अब पहले के समान नहीं रहा, न ही मुझे प्रेम से देखता है, न मुस्कुराकर बोलता है, न रहस्यों को प्रकट करता है, न उपहाररूप में प्राप्त आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भेजता है, न मेरे द्वारा किए गए अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर की वार्ता को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों की ओर देखता है, न अत्यन्त गोपनीय कार्यों में सम्मिलित करता है और न ही अन्तःपुर में मुझे प्रवेश करवाता है। इतना ही नहीं, वसुरक्षित यह भी अनुभव करता है, उसके शत्रुओं पर विश्वास प्रदर्शित करता है। उसके वचनों का उत्तर नहीं देता है। उसके समान दोष वालों की निन्दा करता है और उसके मर्म का उपहास करता है।

2 राजा केवल वसुरक्षित के विचारों की ही अवहेलना ही नहीं करता था, अपितु उसके द्वारा कहे गए अपने मत का भी तिरस्कार करता था। वसुरक्षित आचार्य चाणक्य के मत को स्मरण करता है, जिसके अनुसार जो लोग राजा के मन के अनुकूल व्यवहार करने वाले होते हैं, वे अहितकारी होते हुए भी प्रिय होते है–**चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः।** जबकि उसका हित चाहने वाले, उसके मन के विपरीत आचरण करने वाला होने से ईर्ष्या के पात्र बन जाते हैं। कुलपरम्परा से राजसेवा में रत रहने के कारण, इतना अपमानित होने पर भी वसुरक्षित, राजा का परित्याग करने में स्वयं को विवश पाता है–**तथापि का गतिः। अविनोतोऽपि न परित्याज्यः।** यद्यपि वह यह भी जानता है कि जब राजा उसके वचनों की ओर ध्यान नहीं देता, तो वह भला उसका क्या उपकार कर पायेगा। नीतिज्ञ अश्मकराज, वसन्तभानु की वक्रदृष्टि विदर्भ पर है और वह इस राज्य पर अपना अधिकार स्थापित करके ही रहेगा, ऐसी आंशका उसके मन में व्याप्त होने लगती है। वह अपने मन को आश्वासन देता है कि सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकटो के कारण अनन्तवर्मा राजनीति में रुचि लेने लगे अथवा सहज पीड़ा से युक्त उन स्थितियों में उत्पन्न हुए द्वेष के कारण दण्डनीति इसे रुचिकर ही न लगे। परिस्थितियों से मानों हार मानते हुए वह कहता है कि अनर्थ तो अवश्यम्भावी है। अच्छा है कि अपनी वाणी को वश में रखते हुए मैं अपने पद पर बना रहूँ।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।